अपनी रचना 'पत्रहीन नग्न गाछ' ... ।

नागार्जुन की काव्यगत विशेषताएं

सभी आलोचकों एवं आचार्यों ने निर्विरोध रूप से कविता के दो पक्ष— भावपक्ष और कलापक्ष स्वीकार किये हैं। आजकल भावपक्ष को अनुभूति पक्ष और कलापक्ष को अभिव्यक्ति कहा जाने लगा है। इस आधार पर नागार्जुन की काव्यगत विशेषताएँ प्रस्तुत हैं—

(क) भावपक्ष अथवा अनुभूति पक्ष

नागार्जुन विद्रोही स्वभाव के कवि हैं। उन्हें शोषण और अत्याचार सहन नहीं है। वे विशुद्ध भारतीय हैं। शोषित, दलित एवं अभावग्रस्त सर्वहारा का समर्थन करने के कारण उन्हें लाल भवानी अर्थात् कम्युनिस्ट पार्टी अच्छी लगती है। काव्य की सड़ी-गली रूढ़ियों का विरोध करने के कारण वे प्रयोगवादी हैं।

प्राचीन मान्यता के अनुसार भावपक्ष के अन्तर्गत रस एवं मान्यताएँ आती हैं। मान्यता को विचारधारा भी कह सकते हैं। प्रयोगवादी रस का समर्थन नहीं करते, पर उनकी कविता में कहीं-कहीं रसानुभूति प्राप्त होती है। नागार्जुन की निम्नलिखित काव्य-पंक्तियाँ शृंगार रस और वात्सल्य रस से सराबोर हैं—

भगवान् अमिताभ!
देकर तिलांजलि मिथ्या संकोच को,
हृदय की बात तो, कहती हूँ आज मैं
कोई एक होता,
कि जिसको अपना मैं समझती,
भले ही वह पीटता, भले ही मारता,
किन्तु किसी क्षण में प्यार भी करता,
जीवन रस उड़ेलता मेरे रिक्त पात्र में,
भूख मातृत्व की मेरी मिटा देता।

नागार्जुन की रचना की प्रवृत्तियाँ बदलती रही हैं। कहीं प्रगतिवादी वृत्ति है, तो कहीं प्रयोगवाद का प्राधान्य हो गया है। कहीं-कहीं ये शुद्ध साहित्यिक भी बन गये हैं। इस प्रकार इनकी रचनाओं में एकरूपता नहीं है, अतः किसी एक श्रेणी में इनकी रचनाओं को आबद्ध नहीं किया जा सकता। प्रगतिवादी एवं प्रयोगवादी विचारधाराओं का मणिकांचन संयोग इनकी रचनाओं में हुआ है। दोनों प्रकार की विचारधाराओं के समन्वय से काव्य में एक प्रकार का सहज भाव-सौन्दर्य संदीप्त हो उठा है। ये लोक-मुख की वाणी बोलते हैं। उदाहरणस्वरूप अग्रलिखित पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं—

Scanned with CamScanner

एक-दूसरे से विमुक्त हो
अलग-अलग रहकर ही जिनको
सारी रात बितानी होती—
निशा काल के चिर अभिशापित
बेबस उन चकवा-चकवी का
बंद हुआ क्रंदन फिर उनमें
उस महान् सरवर के तीरे
शैवालों की हरी दरी पर प्रणय-कलह छिड़ते देखा है।

व्यंग्य और विनोद—आधुनिक हिन्दी कविता में शिष्ट गम्भीर हास्य तथा सूक्ष्म चुटीले व्यंग्य की सृष्टि के कारण ही नागार्जुन द्वारा प्रणीत काव्य अपना अलग महत्त्व रखते हैं। ये भावनाओं को कुंठित नहीं करना चाहते हैं। अत: सीधे सब-कुछ कहकर प्रहार करने में बिल्कुल नहीं हिचकते। जब सामाजिक कुरीतियों पर प्रहार करते हुए उद्यत होते हैं, तब इनकी व्यंग्यात्मक शैली मुखर हो उठती है। इस प्रकार तथ्यों के विवेचन में व्यंग्य और विनोद का सहारा कवि के लिए वरदान सिद्ध हुआ है और उसका प्रभाव चुटीला है। व्यंग्य करने में ये संकोच नहीं करते हैं। तीखी और सीधी चोट करने वाले ये वर्तमान युग के प्रमुख व्यंग्यकार हैं।

मार्क्सवादी विचारधारा—कहीं तो इन्होंने आंचलिक परिवेश में ग्रामीण परिवार के सुख-दु:ख की कहानी कही है और कहीं सामाजिक आन्दोलनों का समर्थन किया है। कहीं-कहीं पर इन्होंने समाज में व्याप्त शोषण-वृत्ति एवं धार्मिक-सामाजिक कुरीतियों पर कुठाराघात किया है। 'बाबा बटेश्वरनाथ' में इस प्रकार के बहुत-से उदाहरण मिलते हैं। इनकी इस कृति में जहाँ जमींदारी उन्मूलन के बाद की सामाजिक समस्या और ग्रामीण परिस्थितियों का चित्रण हुआ है, वहीं इन सामाजिक समस्याओं और परिस्थितियों के। निदान हेतु एक सामाजिक संगठन की कल्पना भी की गयी है। इस संगठन के माध्यम से व्यापक संघर्ष की परिकल्पना सामाजिक ढाँचे के परिवर्तन का प्रतीक है। इसी रचना के बाद इन पर आक्षेप किया गया कि ये मार्क्सवादी विचारधारा के कवि हैं, परन्तु वास्तविकता यह नहीं है। यह तो साहित्य-सर्जक की विचारधारा है, जिसका जन्म उसकी अनुभूतियों के क्रोड में हुआ और अवसर-विशेष पर उद्दीप्त होकर वह प्रकाश में आ गयी है। जैसे—

मेरा क्षुद्र व्यक्तित्व—
रुद्ध है, सीमित है,
आटा, दाल, नमक, लकड़ी के जुगाड़ में।
पत्नी और पुत्र में, सेठ के हुकुम में।
कलम ही मेरा हल है, कुदाल है!
बहुत बुरा हाल है।

प्रगतिवादी नागार्जुन—विश्वम्भर मानव ने अपनी पुस्तक 'नयी कविता' : नये कवि' में नागार्जुन प्रगतिवादी स्वीकार करते हुए लिखा है—

"साम्यवाद की मान्यताओं के अनुकूल अपनी जीवन दृष्टि बनाकर काव्य में प्रगतिवाद की पुष्टि करने में नागार्जुन अग्रणी हैं।" उनके जीवन की परिस्थितियाँ कुछ ऐसी रही हैं कि वे जिस ढंग से सोचते हैं; उसके भिन्न सोच ही नहीं सकते थे—

पैदा हुआ था मैं—
दीनहीन अपठित किसी कृषक कुल में,
आ रहा हूँ पीता अभाव का आसव ठेठ बचपन से,
कवि! मैं रूपक हूँ दबी हुई दूब का।
जीवन गुजरता प्रतिपल संघर्ष में।

Scanned with CamScanner

(ख) कलापक्ष या अभिव्यक्ति पक्ष

कविता के कलापक्ष के अन्तर्गत छन्द, अलंकार और भाषा आते हैं। जहाँ तक छन्दों का प्रश्न है, नागार्जुन ने परम्परागत और मुक्त दोनों प्रकार के छन्दों का आश्रय लिया है—

1. **परम्परागत छन्द**—इस छन्द में सभी पंक्तियाँ समान मात्राओं वाली होती हैं और तुक मिलती है—

कई दिनों तक चूल्हा रोया चक्की रही उदास,
कई दिनों तक कानी कुतिया सोई उसके पास।
कई दिनों तक लगी भीत पर छिपकलियों की गश्त,
कई दिनों तक चूहों की भी हालत रही शिकस्त।

2. **मुक्त छन्द**—इसमें कोई नियम नहीं होता। मनमाने रूप से पंक्तियाँ छोटी-बड़ी होती हैं। एक पंक्ति में एक बात/तुक मिल गयी, तब भी ठीक, नई नहीं मिली, तब भी ठीक। जैसे—

धरती भरती है—
पनाई हुई गाय नहीं
कि चट से दुह लो कटियाभर दूध।
धरती धरती है—
चावल या गेहूँ की ढेर नहीं
कि कुर्क कटा के उठा ले जाओ।

3. **अलंकार**—प्रगतिवादियों ने तो नहीं, पर प्रयोगवादियों ने अलंकारों का बहिष्कार कर दिया। नागार्जुन प्रगतिवादी ही नहीं, प्रयोगवादी भी हैं। उन्होंने अलंकारों की कोई। चिन्ता नहीं की है। अलंकार अपने आप आ जायें तो ठीक, नहीं आयें तब भी ठीक। जैसे—

शिष्योचित श्रद्धा भक्ति
पुत्रोचित परिचर्या
पति सुलभ प्रीति
मातृ सुलभ ममता
पितृ सुलभ परिपोषणा
चाहती आई है सदा से धरती।

यहाँ पहली पाँच पंक्तियों में अनुप्रास अलंकार है

4. **भाषा**—भाषा के बिना कोई साहित्यिक रचना नहीं होती। इनकी भाषा सरल; स्पष्ट बोधगम्य है। इसका मार्मिक प्रभाव चुटीला है, क्योंकि यह लोक-भाषा के निकट है।

रजत-रचित मणि खचित कलामय
पान-पात्र द्राक्षासव पूरित
रखे सामने अपने-अपने
लोहित चंदन की त्रिपदी पर—
नरम निदाग बाल कस्तूरी—
मृगछालों पर पल्थी मारे।
मदिरारुण आँखों वाले उन
उन्मद किन्नर किन्नरियों की
मृदुल मनोरम अँगुलियों को वंशी पर फिरते देखा है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि नागार्जुन की कविता में भावपक्ष और कलापक्ष का पूर्ण निर्वाह हुआ है। निम्न मध्यवर्गीय ग्राम्य जीवन से सम्बद्ध नागार्जुन की कविताओं में प्रकृति एवं ग्राम्य जीवन के अनेक चित्र सहज

Scanned with CamScanner

उपलब्ध हैं। यह जीवन नागार्जुन की कविताओं को भिन्न भाव भूमि एवं भाषा प्रवाह प्रदान करता है। जीवन से रागात्मक जुड़ाव की नागार्जुन की कविताएँ अभावग्रस्त जिन्दगी–भूख की पीड़ा, प्राणरक्षक जीवन–सुविधाओं के अभाव को मार्मिक स्वर तो देती ही हैं, साथ ही सम्प्रदायवाद, जातिवाद, पूँजीवाद, भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी, साम्राज्यवादी नीति, तानाशाही, राजनीतिक शोषण एवं युद्ध भी व्यंग्यात्मक स्वर उठाती हैं। कथ्य के अनुकूल भाषा का प्रयोग कविता को सहज संवेद्य बनाता है।

Scanned with CamScanner